नाद-नर्तन
जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूजिक

ISSN: 2349-4654
वर्ष : 14, अंक : 1, जनवरी 2026

मरू धरा के लंगा मांगणियार लोक संगीत संरक्षक : कोमल कोठारी (कोमल दा)

मोनिका भट्ट

शोधार्थी,
संगीत विभाग, अकाल कॉलेज ऑफ आर्ट्स एण्ड सोशल साइंसेज
इटरनल यूनिवर्सिटी, बरु साहिब (हि.प्र.)

डॉ. पूर्वी लुनियाल

शोध निर्देशिका,
प्रोफेसर व डीन, संगीत विभाग, अकाल कॉलेज ऑफ आर्ट्स एण्ड सोशल साइंसेज, इटरनल यूनिवर्सिटी, बरु साहिब (हि.प्र.)

सार-संक्षेप

मरू धरा - राजस्थान का वो सिरा जिसकी पहचान रेत के उड़ते धोरों, हाथों में सारंगी लेकर रंग-बिरंगी पगड़ी पहने हुए गीत गाते लोक कलाकारों, नृत्य करती हुई कालबेलिया नृत्यांगनाओं से होती है। इस राज्य का नाम स्मरण होते ही राजसी ठाठ और राजपूती विरासत का स्वामित्व हमारी आँखों के समक्ष उभर आता है। जितना अद्भुत यहाँ का इतिहास एवं परम्परायें है, उससे भी सुरीला यहाँ का पारम्परिक लोक संगीत है। रेगिस्तानी धोरों से निकला हुआ लंगा एवं मांगणियार संगीत जीवी जातियों का लोक संगीत श्रोताओं के चित्त पर गहन प्रभाव डालता है। इनका लोक संगीत पीढ़ी दर पीढ़ी राजस्थानी सांस्कृतिक विरासत को सहेजे हुए है,जिसके संरक्षण के लिए किये गए प्रयासों में स्व. श्री कोमल कोठारी जी (कोमल दा) द्वारा स्थापित रूपायन संस्थान द्वारा इनके संगीत को बचाने के लिए मौखिक दस्तावेजीकरण एवं डिजिटलीकरण करने की कोशिश सराहनीय है। इनका मुख्य उद्देश्य लंगा मांगणियार लोक संगीत परम्पराओं को आने वाली पीढ़ियों के लिए डिजिटल रूप में संगृहीत करना एवं इनके प्रशिक्षण पर जोर देना है। इस लेख के माध्यम से राजस्थानी लोक संगीत के इसी संरक्षणरूपी पहलु को बताने का छोटा सा प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द : लोक संगीत, लोकगीत, सांस्कृतिक विरासत, लोक-कला, लंगा – मांगणियार, कोमल कोठारी, लोकवाद्य,राजस्थानी लोक संगीत

शोध-पत्र

भूमिका

लोक संगीत संगीत का वह रूप है, जिसकी उत्पत्ति लोगों के द्वारा, लोगों के लिए हुई है। इसे लोगों के द्वारा जन्म-मृत्यु के संस्कारो से लेकर, राजाओं एवं महाराजाओं के युद्ध में विजय से जुडी गाथाएं तथा वीर रस के गीत आदि के लिए प्रस्तुत किया जाता है। क्युकी यह पूर्ण रूप से लोगों के लिए है,अतः इसकी भाषा क्षेत्र विशेष होती है। लोक संगीत मानवीय भावनाओं को सबसे सशक्त माध्यम है, जिसकी भाषा भले ही समझ न आये पर उसके स्वर मन को मोहित करने वाले होते है। लोक संगीत सभी प्रकार के सांगीतिक बंधनो से मुक्त होता है।[1] (कुमार, 549) लोक संगीत की तीनो विधाएँ : लोक गीत, लोक नृत्य, लोक वाद्य प्राचीन काल से ही जनता के मनोरंजन के साधन रहे है।

ये लोक संगीत विधाएँ बहुत पुराने समय से चली आ रही है, पुराने समय में राजाओं के दरबार में प्रस्तुत होने वाला लोक संगीत आज दुनियाभर में प्रचलित है। लोक संगीत के साथ लोक धुनों का संगम लोक संगीत को ओर अधिक मधुर बना देता है। लोक गीतों में मुख्य रूप से कहरवा एवं दादरा ताले प्रयुक्त होती है साथ ही कही - कही दीपचंदी, झुमरा, रूपक का भी प्रयोग दिखाई पड़ता है।[2] (समर,19)

भारत के राजस्थान राज्य के लोक संगीत की छटा निराली है। आज राजस्थानी लोक संगीत राजस्थान राज्य की सीमा तक ही सीमित नहीं है, अपितु देश विदेश में भी लोगों के ज़ेहन में अपनी लोक - संस्कृति की छाप छोड़ता है।

राजस्थानी लोक संगीत में मूल रूप से दो हिस्सों के लोक गीत देखे जाते है[3] (कुमार, 564)

(1) पहाड़ी या दक्षिणी भागों के लोक गीत (2) मैदानी या रेगिस्तानी भागों के लोक गीत

अन्य राज्यों की तरह राजस्थान में भी इस लोक संगीत को प्रस्तुत करने

वाली जातियाँ निवास करती है। इन संगीतजीवी जातियों का जीवन इनके सांगीतिक पेशे पर ही आधारित होता है। यह पेशा संगीत की तीनो विधाओं, नृत्य, गायन या वादन में से कोई भी हो सकता है। अपने दैनिक रोजमर्रा की सभी वस्तुओं से लगाकर जीवन के हर संस्कार के लिए ये जातियाँ लोगों पर निर्भर रहती है। पूर्व में ये जातियाँ राजस्थानी रजवाड़ो के महलों में अपनी कलाओं का प्रदर्शन करती थी, समयोपरांत राजा शासन ख़त्म होने के पश्चात् आज ये जातियाँ महलो के बाहर अपने हुनर को प्रदर्शित कर रही है। इन में से कुछ पेशेवर जातियाँ पुराने समय से अपने सरंक्षणों पर निर्भर रहती है, जिन में से प्रमुख जातियाँ लंगा मांगणियार समुदाय के मनमोहक लोक संगीत की छटा निराली है।

यह शोध पत्र इनकी लोक कलाओं के बारे में तथा उनके संरक्षण में नृवंशविज्ञानी एवं राजस्थानी लोक साहित्यकार स्व श्री कोमल कोठारी जी (कोमल दा) द्वारा इन जातियों के लोक संगीत के संरक्षण - संवर्धन के लिए किये गए प्रयासों को संक्षिप्त में बताने का एक जरिया है।

लंगा एवं मांगणियार जातियाँ कौन है?

लंगा एवं मांगणियार जाति पेशेवर संगीतजीवी जातियाँ है,जोकि पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी लोक कलाओं को आगे बढ़ाते है। भारत - पाकिस्तान विभाजन के चलते इन जातियों का कुछ परिवार पाकिस्तानी इलाकों में रह गए, जबकि ज्यादातर भारत में आ गए। शुरुआती दिनों में ये जातियाँ घुमक्कड़ भी रही होंगी, पर अब इनके रहने के मुख्य ठिकाने जैसलमेर, जोधपुर, बाड़मेर के सीमावर्ती रेगिस्तानी इलाको में आस पास के गाँव है। इनके संगीत में राजस्थानी लोक गीतों,संस्कार लोक गीतों, गाथाओं और वंशावलियों का अनोखा संगम दर्शनीय है।

ये जातियाँ पुराने समय से एक आर्थिक व्यवस्था प्रणाली जिसे जजमानी या संरक्षक प्रथा कहा जाता था, उससे बंधी हुई थी। उस दौर में इनका संगीत सिर्फ उनके सरंक्षकों के घरों तक ही रहा। इन सरंक्षकों को जजमान कहा जाता था। तब ये दोनों ही जातियाँ अपनी जीविका के लिए अपने जजमानो पर आश्रित रही। चाहे बच्चे का जन्म संस्कार हो या विवाह हर कार्य इनके गीतों, गाथाओं के बिना अधूरा माना गया। सिंधी सिपाही लंगा जाति के संरक्षक वर्ग को कहा जाता है, इनके नाम से ही लगता है कि एक समय में सिंध के सैनिक रहे होंगे जो अब पशुपालन आदि करने वाली एक जाति है।[4] (Neuman,244)

इनके संरक्षक (जजमान) सिंधी मुस्लिम समुदाय से होते है एवं मांगणियार के जजमान राजपूत समुदाय से होते है। दोनों समुदायों के रहन सहन पर उनके जजमानों का प्रभाव दर्शनीय है। लंगा जाति में भी 2 उपवर्ग पाए जाते है।[5] (समर, 72)

लंगा मांगणियार का सांगीतिक पक्ष

ये दोनों ही समुदाय संगीतजीवी जातियाँ है, अतः इनके भरण पोषण का मूल साधन इनका लोक संगीत ही है। इन जातियों की सांस्कृतिक और संगीत परंपराएँ हिंदू और मुस्लिम रीति रिवाज़ों एवं संस्कारों के मिश्रण को आश्रय देती रही है। जिनके विषय संस्कारों के अलावा हिन्दू एवं मुस्लिम भक्ति के लोक गीतों में भी व्याप्त है। इन दोनों समुदायों द्वारा प्रचलित लोक कलाओं में लोक गीत, गाथाएँ, और लोककथाएँ शामिल हैं। इनके गीतों की मुख्य भाषा मारवाड़ी, सिंधी आदि रहती है।

'इनका लोक संगीत मुख्य रूप से 6 रागों पर आधारित रहता है, जोकि 4 दिशाओं एवं आसमान (ऊपर), धरती (नीचे) को दर्शाते है। ये राग निम्न है : मारू (उत्तर), सोरठ (दक्षिण), धानी (पूर्व), सूभ (पश्चिम), मेघ मल्हार (ऊपर) और गौड़ मल्हार (नीचे)।'[6] (खान)

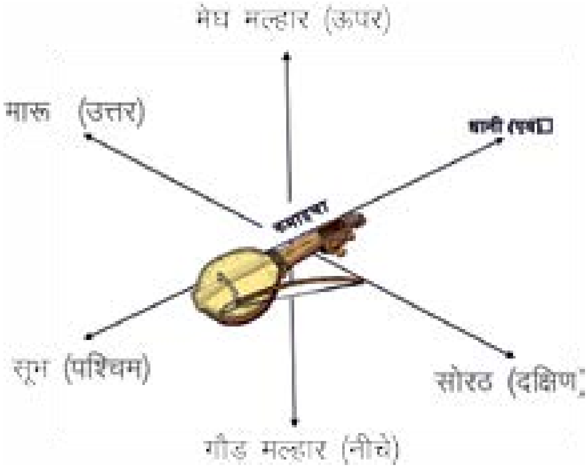

मांगणियार लोक कलाकारों अपने सुरीले गीतों के साथ संगत के तौर पर मुख्य रूप से प्राचीन राजस्थानी लोक वाद्य 'कमायचा' बजाते है, इसे एक मांगणियार कलाकार की पहचान माना जा सकता है। वही लंगा जाति के लोक कलाकारों के लोक गीतों के साथ सिंधी सारंगी की संगत देखी जा सकती है।

प्रसिद्ध लंगा - मंगनियार लोकगीत के कुछ अंश :

1. आवण जावण कह गयो, कर गयो कोल अनेक
   गिणता गिणता घीस गयी, म्हारा आंगलिया री रेख
   कदी आओ नी रसीला मारे देश, जोवां थारी बाट घणी।।
2. जद जद देखु बन्ना री लाल पीली अंखियां,
   मैं कोनी चालू सा भले ही कादो अंखियां
   जेसाणे रे सहर बन्ना चुड़लियो मोलाई दो
   मैं कोनी पेरू सा भले ही कादो अंखियां।।
3. मैं लोली देवा नींद मीठे हे बार खे, मैं सदके जावा नींद मीठे हे बार खे
   हूं जागो जागो जागो.. हूँ कृष्ण कन्हैया जागो।।

रेगिस्तानी लोक संगीत की जीवंत परम्पराओं के रखवाले कोमल कोठारी

कोमल कोठारी (1929-2004) राजस्थानी धरती से जुड़े नृवंशविज्ञानी, लोक परंपराओं के विशेषज्ञ, लोक कला मर्मज्ञ थे। जो राजस्थान की

जोधपुर से थे और जिन्होंने अपने जीवन के अंतिम पड़ाव तक राजस्थानी सांस्कृतिक लोक परम्पराओं, लोक संगीत को सहेजने का कार्य किया। अपने प्रियजनों और मित्रों के बीच कोमल दा एवं काका के नाम से प्रचलित कोमल कोठारी ने राजस्थानी लोक कलाओं, लुप्त होते जा रहे लोक संगीत, लोक वाद्यों के संरक्षण के यथाशक्ति प्रयास किये। अपने इस कार्य के शुरुवाती दिनों में अपने प्रिय मित्र प्रसिद्ध राजस्थानी साहित्यकार श्री विजयदान देथा ''बिज्जी'' के साथ मिल कर बोरुंदा में 1960 में रूपायन संस्था की स्थापना करना, उनके इस प्रयास की पहली सीढ़ी थी।[7] (सिंह)

जहाँ ग्रामीणों के सहयोग से उन्होंने एक प्रिंटिंग प्रेस की स्थापना की। जो कि लोक परम्पराओं के संरक्षण के उनके प्रयासों को एक दिशा की ओर ले गया। इन मौखिक परम्पराओं के दस्तावेजीकरण पर कार्य की शुरुआत हो चुकी थी। कोमल दा ने में अपनी पत्रिका प्रेरणा के लिए लंगा एवं मांगणियार जातियों के गीतों को उनसे एकत्रित करना शुरू किया और अपने अग्रज समान श्री सीताराम लालस जी के साथ मिलकर राजस्थान शोध संस्थान चौपासनी के शोध पत्र ' परंपरा' जो कि लोक गीतों पर आधारित था, उसे निकाला।[8] (चारण, 12)

आज से 35 - 40 वर्षों पूर्व ये इतना आसान नहीं था। ये उनके दृढ़ निश्चय का ही नतीजा है, जिसके परिणामस्वरूप आज की पीढ़ी इन परम्परों को जीवंत रूप में देख पा रही है। कम संसाधनों की उपलब्धता के होते हुए भी जैसलमेर, जोधपुर के आस पास के सीमावर्ती इलाकों में जाकर इन कलाकारों के लुप्त होती संगीत परम्पराओं को रिकॉर्ड करने का विचार जब उनके मन में आया तो उन कलाकारों को उसके लिए राज़ी करना अपने आप में एक बड़ी चुनौती रहा। ना लोगों ने उस समय कैमरा देखे,ना रिकॉर्डर और उस पर उनके बीच उस समय फैला हुई ये भ्रम कि यह रिकॉर्डर हमारी आवाज़ छीन लेगा तो हम कभी गा नहीं पाएंगे। कुछ समय के संघर्ष के बाद अपने संरक्षण से जुड़े प्रयासों को इन कलाकारों को समझाने में सफल रहे और उन्हें रिकॉर्ड कर पाए। इस संस्थान के शुरुआती दिनों में उन्होंने लोक गीतों और लोक कथाओं को रिकॉर्ड करना शुरू किया। क्योकि कोमल दा की रूचि इन जातियों से जुड़े हर एक पहलु को समझने से थी,अतः उन्होंने इन जातियों से जुड़े हर एक विषय जैसे कि महाकाव्यों, गीतों, लोक संगीत, लोक नाटक,रीति रिवाज़, संस्कार,उनकी कृषि योजनाएँ, भूमि एवं जल आदि पर एक नृवंशविज्ञानी के तरीकों से उन पर शोध किया, दस्तावेजीकरण किया एवं रिकॉर्ड किया।

कोमल दा अपने सम्पूर्ण जीवनकाल में पेशेवर जातियों के मौखिक ज्ञान को सीखने एवं पीढ़ी दर पीढ़ी इस ज्ञान को आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाने में रूचि रखते थे। उन्होंने पारम्परिक लोक कलाकारों के साथ काम करते हुए उनके लोक संगीत के दस्तावेजीकरण, संरक्षण एवं विकास की दिशा में कार्य किया। उनके प्रयासों से ही इन लोक कलाकारों, गायकों, नर्तकों के लिए विदेशों में अपनी लोक कला के प्रदर्शन के अवसर भी उपलब्ध करवाए जिसने पूरी दुनिया का ध्यान राजस्थानी लोक कला की ओर आकर्षित किया। उनके बाहरी प्रदर्शन के परिणामस्वरूप यूरोप, जापान एवं भारत में कई सहयोगी वाणिज्यिक फिल्में एवं रिकॉर्डिंग्स तैयार की गई।[9](Indian Folk lore)

कोमल दा ने इस मुहीम के बाद इन कलाकारों को दुनिया से रूबरू करने के लिए हर संभव प्रयास किये। ये उनके प्रयासों का नतीजा था कि - पहली बार इन लोक कलाकारों को राष्ट्रीय मंच पर अपनी कला को प्रदर्शन करने का मौका मिला और कुछ समय बाद अंतर्राष्ट्रीय मंच पर कई हिस्सों में जैसे यूके, अमेरिका, स्वीडेन, फ्रांस, नीदरलैंड, स्विज़रलैंड, इटली, स्पेन, जापान आदि स्थानों पर भी अपनी प्रतिभा से लोगो के दिलों को राजस्थानी मनमोहक लोक गीतों से कायल कर दिया।

कोमल दा का मानना था कि - इनके प्राचीन लोक वाद्य इन जातियों की पहचान है। जब तक इनके लोक वाद्यों का अस्तित्व है, तब तक इन जातियों की लोक कला भी जीवित है। इनके संरक्षण के लिए कोमल दा ने कमायचा एवं सिंधी सारंगी जैसे वाद्य यंत्रो को इन जातियों को बनवा कर बांटना शुरू किया एवं रूपायन संस्थान ने बोरुंदा में 1989 में 'कमायचा - सारंगी मेला ' आयोजित किया, जिसके अंतर्गत इन वाद्यों के निर्माण से लगा कर इनके प्रशिक्षण तक की तकनीकों को उन्होंने लोक कलाकारों के साथ मिल कर जनता के साथ साझा किया। 10 (कोठारी)

इन लोक सांस्कृतिक परम्पराओं, लोक संगीत, लोक कथा, रिकॉर्डिंग्स आदि के संरक्षण करते हुए कोमल दा की परिकल्पनाओं में एक जीवित संग्राहलय को बनाने के संकल्प ने जन्म लिया। जिसका उद्देश्य था– इन मौखिक परम्पराओं, लोक संस्कृति, लोक संगीत आदि के बारे आम लोगो के सहभागिता बढ़ाना ओर आने वाली पीढ़ियों को इन चीज़ो के बारे में बताना। जिसकी स्थापना कोमल दा द्वारा सन 2000 में जोधपुर के निकटवर्ती मोकलावास गांव में अरना - झरना संग्राहलय के नाम से हुई।

कोमल दा द्वारा समय - समय पर कई प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन किया गया, वर्तमान में भी रूपायन संस्थान के अंतर्गत कोमल कोठरी लोक संगीत विद्यालय इसी तरह के शिविरों का आयोजन करता है। कोमल दा इन राजस्थानी पेशेवर जातियों को रिकॉर्ड करने वाले पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने अपनी निरन्तर कोशिशों के चलते इन कलाकारों के लोक संगीत को गांव से निकल कर विश्व मंच पर ला खड़ा कर दिया।

शोध समस्या

रेगिस्तानी धोरों से निकले लंगा - मांगणियार लोक कलाकारों के लोक संगीत की पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही लोक संगीत परंपरा के सरक्षण के लिए जो भी प्रयास हुए है उनमें कोमल कोठारी का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। हालाँकि कोमल दा द्वारा किये गए लोक संगीत के संरक्षण के प्रयासों के परिणामस्वरूप इन जातियों की समृद्ध संगीत परम्पराओं को बचाया तो जा रहा है, परन्तु अभी भी इनकी ओर आम लोगों का ध्यान

केंद्रित करने की आवश्यकता है, जिससे इस विरासत को आने वाली पीढ़ियों के लिए ओर भी बेहतर तरीके से सरंक्षित किया जा सके।

उद्देश्य

नृवंशविज्ञानी एवं लोक साहित्यकार स्व कोमल कोठारी (कोमल दा) के लंगा एवं मांगणियार जाति के लोक संगीत के मौखिक दस्तावेजीकरण, रिकॉर्डिंग्स, संरक्षण एवं संवर्धन हेतु किये गए प्रयास इन जातियों के लुप्त होती संगीत परंपरा एवं अभावग्रस्त जीवन में उम्मीद के एक किरण बन कर आये, कोमल दा के इसी योगदान का संक्षिप्त अध्ययन करना।

कोमल दा द्वारा इन जातियों की मौखिक परम्पराओं और सांगीतिक विरासत को वैश्विक स्तर तक ले जाने से निश्चित ही इन जातियों की आने वाली पीढ़ियां तथा गैर संगीतज्ञ लोगों तक इनको प्रसारित करने से इन जातियों के सामाजिक, आर्थिक स्तर पर क्या प्रभाव पड़ा ये जानने का प्रयास करना।

शोध का दायरा

यह शोध पत्र राजस्थानी लंगा - मांगणियार संगीतजीवी जातियों के लोक संगीत को रिकॉर्डिंग्स, अभिलेखीकरण एवं मौखिक दस्तावेजीकरण हेतु किये गए कोमल कोठारी के व्यक्तिगत एवं अपनी संस्था के रूप में नृवंशविज्ञान लोक संगीतशास्त्र से जुड़े पहलुओं पर किये गए प्रयासों को संक्षिप्त में बताने का माध्यम है। साथ ही अपने प्रयासों के कारण किस प्रकार उन्होंने इन जातियों के लोक संगीत को विश्वभर में प्रसिद्ध करने के साथ ही उनके हुनर को जन-साधारण से अवगत कराने एवं सामाजिक पहचान के साथ - साथ अपनी लोक परम्पराओं को बनाये रखने की चुनौतियों का एक सूक्ष्म अध्ययन है।

अध्ययन की प्रासंगिकता

इस शोध पत्र का अध्ययन रेगिस्तानी इलाकों में रहने वाले हाशिए पर पड़े लंगा एवं मांगणियार समुदाय की विलुप्त होती अमूर्त सांस्कृतिक लोक संगीत परम्पराओं के सरंक्षण और संवर्धन में कोमल दा के महत्त्वपूर्ण योगदान को बताने में प्रासंगिक है। वर्तमान में शहरीकरण, घटती हुए सामाजिक परम्परायें, लुप्त होते संस्कार गीत, बॉलीवुड संगीत का लोक संगीत पर प्रभाव, संरक्षण की कमी, पीढ़ीगत बदलाव आदि के कारण इन जातियों के पारम्परिक लोक संगीत एवं परम्पराओं में गिरावट आ रही है, ऐसे में कोमल दा के प्रयासों का विश्लेषण इस बात की ओर ध्यान आकर्षित करता है कि - मौखिक दस्तावेजीकरण, कार्यशालाओं आदि के उपयोग से किस तरह इस लुप्त होते लोक सांगीतिक परम्पराओं का सरंक्षण एवं पुनरुथान प्रयासों को अपनाने की आवश्यकता है।

साथ ही यह भी अंकित करता है कि - इन लोक कलाकारों के सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान हेतु आने वाले समय में इस विषय पर शोध कर रहे शोधकर्ताओं के समक्ष कोमल दा के अविस्मरणीय योगदान का एक जीवंत उदाहरण प्रस्तुत करता है।

शोध प्रविधि

अध्ययन का क्षेत्र : राजस्थान (रूपायन संस्थान,अरना झरना संग्राहलय, जैसलमेर, जोधपुर, बाड़मेर, आदि)

गुणात्मक नृवंशविज्ञान शोध विधि : रिकॉर्डिंग्स, लिखित दस्तावेज, लोक कलाकारों के साक्षात्कारों

ऐतिहासिक शोध विधि : लोक कलाकारों के प्रदर्शनों को रिकॉर्ड किया, तस्वीरों को एकत्रित किया, स्वलिखित लेखो, पत्र -पत्रिकाओं, डायरी आदि पर शोध

चर्चा

लंगा मांगणियार संगीत जीवी समुदायों के पीढ़ी दर पीढ़ी चलने वाले लोक संगीत के मौखिक दस्तावेजीकरण में कोमल दा के प्रयासों के परिणाम स्वरूप ही आज इन जातियों का लोक संगीत आने वाली पीढ़ियों के लिए संरक्षित रूप में उपस्थित है, अन्यथा अभी तक इन जातियों का लोक संगीत लुप्त प्राय हो चुका होता। कोमल दा के नृवंशवादी दृषिकोण ने इन परम्पराओं को अपार चुनौतियों का सामना करते हुए उस समय सावधानीपूर्वक संरक्षित करके रखा जब इतने उपयुक्त संसाधन नहीं हुआ करते थे जो कि लोक संगीत ओर सांस्कृतिक विरासत के संवर्धन एवं संरक्षण के प्रति जुड़े व्यक्तिगत प्रयासों में अपने आप में एक मिसाल है।

बढ़ते आधुनिकीकरण के कारण वर्तमान में भी इन जातियों को कुछ चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। कोमल दा के प्रयासों का अनुसरण करते हुए वर्तमान में भी उनके द्वारा स्थापित रूपायन संस्था निरन्तर इस दिशा में कार्य कर रही है। यह चर्चा आपका ध्यान इस ओर आकर्षित करती है कि - किस प्रकार इन जातियों के लोक संगीत के स्थायी सरंक्षण के लिए ऐसी योजनाएं बनायीं जाये जिनसे पुनः उनका लोक संगीत अपने मूल रूप में संरक्षित रहे जो कि बिना सामुदायिक भागीदारी के नहीं किया जा सकता।

निष्कर्ष

मरू धरा के सीमावर्ती हिस्सों में हाशिये में पड़े लगा मांगणियार पेशेवर जातियों के लोक संगीत, लोक गीतों, लोक वाद्यों को सरंक्षित एवं संवर्धित करने का बीड़ा आज से 35 - 40 वर्षों पूर्व नृवंशविज्ञानी लोक साहित्यकार कोमल कोठारी (कोमल दा) ने उठाया था। उनका ये प्रयास ना सिर्फ वर्तमान में बल्कि आने वाले पीढ़ियों को भी राजस्थान के लोक संगीत से अवगत करवाएगा। कोमल दा के अभिलेखागार में मौखिक दस्तावेजीकरण, लगभग 7,078 घंटों की रिकॉर्डिंग्स, कैसेट्स,तस्वीरें आदि का संग्रह उपलब्ध है। जिसके डिजिटलीकरण पर वर्तमान में रूपायन संस्था के सचिव श्रीमान कुलदीप जी कोठारी द्वारा कार्य जारी है। कोमल दा द्वारा स्थापित रूपायन संस्था एवं अरना झरना संग्राहलय वर्तमान में भी इन लोक परंपरा के जीवंत केंद्र है।

यद्यपि इन प्रयासों के परिणामस्वरूप इन जातियों के सामाजिक, आर्थिक स्तर में काफी परिवर्तन आये, परन्तु वर्तमान में भी आधुनिकरण के तहत इन जातियों को आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पुनः सशक्त बनाने एवं इनके लोक संगीत को ओर अधिक प्रसारित करने के लिए इस दिशा में अन्य सरकारी, गैर सरकारी संस्थानों द्वारा ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कुमार अशोक 'यमन', संगीत रत्नावली, अभिषेक पब्लिकेशन्स, 2015
2. समर देवीलाल, राजस्थान का लोक संगीत, भारतीय लोक - कला मंडल,संशोधित संस्करण 2018
3. कुमार अशोक 'यमन' ,संगीत रत्नावली, अभिषेक पब्लिकेशन्स, 2015
4. Neuman Daniel, Chaudhuri Shuba with Komal Kothari, BARDS BALLADS AND BOUNDARIES, Seagull Books 2006, The Regents of the University of California, 2006
5. समर देवीलाल, राजस्थान का लोक संगीत, भारतीय लोक - कला मंडल,संशोधित संस्करण 2018
6. साक्षात्कार : खान मंजूर, साक्षात्कारकर्ता : मोनिका भट्ट, 26 जुलाई 2025
7. सिंह, विशाल प्रताप 'देव', बोरुंदा की मौखिक इतिहासकारः कोमल कोठारी, सहपीडिया, https://www.sahapedia.org/the-oral-historian-borunda-komal-kothari, accessed 24 Aug. 2025.
8. चारण कैलाशदान, राजस्थान के प्रमुख कथा गीत, राजस्थानी ग्रंथागार, प्रथम संस्करण 2022
9. Life and works of Shri Komal Kothari, INDIAN FOLKLIFE VOLUME 3 ISSUE 3 SERIAL NO. 16 JULY 2004
10. कोठारी कोमल,रूपायन संस्थान, कमाइचा–सारंगी मेला, https://archive.org/details/dni.ncaa.RS-31-VHS, 10-8-1989